

होटल इम्पीरियल का प्रबंधन नई दिल्ली और अन्य

बनाम

होटल श्रमिकों का संघ

(बी.पी. सिन्हा, पी.बी. गजेन्द्रगडकर और के.एन. वांचू, जेजे.)

औद्योगिक विवाद-जांच के परिणामस्वरूप श्रमिकों को बर्खास्त करने की अनुमति मांगने वाला नियोक्ता-न्यायाधिकरण द्वारा इस आवेदन के निर्णय के लंबित रहने तक श्रमिकों का निलंबन-वैधता-श्रमिक, यदि निलंबन की अवधि के दौरान वेतन के हकदार हैं- अंतरिम राहत का अनुदान-सर्वोच्च न्यायालय की शक्ति- औद्योगिक विवाद अधिनियम (14/1947) एस.एस.10(4), 33।

अपीलार्थी, जो तीन होटलों का प्रबंधन थे, ने अपने कुछ कर्मचारियों को बर्खास्त करने का फैसला किया जो उनके द्वारा की गई पूछताछ के परिणामस्वरूप दुराचार के दोषी पाए गए थे और औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33 के तहत औद्योगिक न्यायाधिकरण की अनुमति की प्राप्ति तक उन्हें बिना वेतन दिए निलंबित कर दिया गया। श्रमिकों ने आवेदनों के निपटारे तक औद्योगिक न्यायाधिकरण में अंतरिम राहत देने के लिए आवेदन किया और न्यायाधिकरण ने पूर्ण वेतन राशि और 25/- रूपए प्रति व्यक्ति प्रतिमाह खाने के बदले के लिए प्रार्थना की गई राहत प्रदान की। प्रबंधन ने इस तरह के अनुदान के खिलाफ अपीलकी, लेकिन श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण ने अपील खारिज कर दी। अपीलार्थी विशेष अनुमति द्वारा इस न्यायालय में आए थे। अपील में निर्णय के लिए दो प्रश्न थे, (1) क्या निलंबित श्रमिकों को धारा 33 की उन्हें बर्खास्त करने और अधिनियम की धारा 33 के अंतर्गत की अनुमति मिलने तक कोई भी मजदूरी देय थी और (2) क्या औद्योगिक न्यायाधिकरण प्रकाशित अंतरिम अधिनिर्णय को छोड़कर अंतरिम राहत देने में सक्षम था।

अभिनिर्धारित किया गया कि यह अच्छी तरह से तय हो चुका है कि स्वामी और सेवक के सामान्य कानून के तहत सेवक को बिना वेतन निलंबित करने की शक्ति को स्वामी और सेवक के एक सामान्य अनुबंध में एक शर्त में निहित नहीं किया जा सकता है बल्कि इस अनुबंध में एक स्पष्ट शर्त या एक वैधानिक प्रावधान से उत्पन्न होना चाहिए जो ऐसे अनुबंध को नियंत्रित करता है।

हेनली बनाम पीज़ एंड पार्टनर्स, लिमिटेड, 1915 (1) के.बी. 698; वॉलवर्क बनाम फील्डिंग एवं अन्य, 1922 (2) के.बी. 66; भारत की राज्य परिषद के सचिव बनाम सुरेन्द्र नाथ गोस्वामी, आई.एल.आर. 1939 (1) कैल. 46 और रूरा राम बनाम संभागीय अधीक्षक, एन.डब्ल्यू.आर, आई.एल.आर. टप्पू (1954) पुंज. 415, संदर्भित किया गया।

लेकिन औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 की धारा 33, जिसने औद्योगिक न्यायाधिकरण की अनुमति होने के अलावा कर्मचारी को बर्खास्त करने के नियोक्ता के अधिकार को छीन लिया, ने नियोक्ता को निलंबित करने का अधिकार देकर सशक्त किया और सामान्य कानून के अनुरूप औद्योगिक कानून में एक मौलिक परिवर्तन पेश किया। नियोक्ता रोजगार के अनुबंध को निलंबित कर दे और स्वयं को वेतन का भुगतान करने और कर्मचारी को सेवा प्रदान करने के दायित्व से मुक्त कर दे जिस निर्णय पर वह उचित जांच के परिणामस्वरूप पहुंचा है कि कर्मचारी का बर्खास्त किया जाना चाहिए। अधिनियम की धारा 33 द्वारा उत्पन्न ऐसी विशिष्ट परिस्थितियों में यह न्यायसंगत और निष्पक्ष है कि औद्योगिक न्यायाधिकरण, जिनके पास स्वामी और सेवक के सामान्य कानून से परे जाने की शक्ति है, ऐसी किसी शर्त को अनुबंध में उल्लेखित करे। इससे परिणाम यह होगा कि अगर न्यायाधिकरण अनुमति देता है तो निलंबित अनुबंध खत्म हो जाएगा और नियोक्ता की ओर से निलंबन की तारीख के बाद किसी भी वेतन का भुगतान करने का कोई दायित्व नहीं होगा। दूसरी ओर, यदि अनुमति देने से इन्कार कर दिया गया तो कामगार निलंबन की तारीख से अपने वेतन के हकदार होंगे।

वेस्टर्न इण्डिया ऑटोमोबाइल एसोसिएशन बनाम औद्योगिक न्यायाधिकरण, बॉम्बे, (1949) एफ.सी.आर. 321 और रोहतास इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम बृजनन्दन पाण्डे, (1956) एस.सी.आर. 800, संदर्भित।

लक्ष्मी देवी शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम पं. राम सरूप, (1956) एस.सी.आर. 916; रानीपुर कोलियरी का प्रबंधन बनाम धुबन सिंह, सी.ए. 768/57, 20.04.59 को निर्णय, एम/एस सासा मूसा शुगर वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम शोबरती खान, सी. एज 746 और 747/57, 29.04.59 को निर्णय और फूलबारी टी एस्टेट बनाम इसके कर्मचारी, (1960) (1) एस.सी.आर.32 स्पष्टीकृत और भरोसा किया।

लेकिन नियोक्ता के निलंबन की शक्ति अधिनियम के तहत न्यायाधिकरण द्वारा श्रमिकों को अंतरिम राहत देने की शक्ति को नहीं छीन सकती है। अधिनियम की धारा 10(4) में आने वाले शब्द "आनुषंगिक" यह साफ करते हैं कि अंतरिम राहत, जहां स्वीकार्य हो, वहां संदर्भ के तहत मुख्य प्रश्न के लिए प्रासंगिक मामले के रूप में अनुमति दी जा सकती है, हालांकि संदर्भ की शर्तों में इसका स्पष्ट रूप से उल्लेख नहीं किया जा सकता है।

यह तय करना आवश्यक नहीं है कि क्या इस प्रकार की अंतरिम राहत अंतरिम अधिनिर्णय के बराबर है। यह मानते हुए भी कि औद्योगिक न्यायाधिकरण अंतरिम राहत नहीं दे सकता सिवाय अंतरिम अधिनिर्णय के जिसे प्रकाशन की आवश्यकता होती है जो इस न्यायालय को वैसी ही अंतरिम राहत देने से रोकता हो जैसी औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा दी जाए और धारा 15, 17, 17 ए का इस न्यायालय द्वारा दिए गए ऐसे निर्णय में कोई भूमिका नहीं हो।

आमतौर पर अंतरिम राहत श्रमिकों को अंतिम सफलता की स्थिति में मिलने वाली पूरी राहत नहीं हो सकती है और अपीलकर्ताओं को इन मामलों में अंतरिम राहत

के रूप में औद्योगिक न्यायाधिकरण द्वारा निर्णय की गई राशि के आधे से अधिक का भुगतान करने के लिए मजबूर नहीं किया जाना चाहिए।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकार: सिविल अपील संख्या 31-33/1958।

विशेष अनुमति द्वारा अपील निर्णय दिनांक 28 मई 1956 से, श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण, लखनऊ (दिल्ली शाखा) की अपीलें संख्या, III 313-315/1955।

एम.सी.सेतुलवाड, भारत के अटॉर्नी जनरल, जय गोपाल सेठी, जे.बी. दादाचंजी, एस.एन. एंडले, रामेश्वर नाथ और पी.एल. वोहरा, अपीलार्थियों की ओर से (सभी अपीलों में)

जी.एस. पाठक, वी.पी. नायर और जनार्दन शर्मा, प्रत्यर्थियों के लिए (सभी अपीलों में)

1959, मई 21 को न्यायालय का निर्णय दिया गया द्वारा वांचू जे. - ये भारत के श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण के तीन निर्णयों से विशेष अनुमति द्वारा तीन अपीले हैं। हम उन्हें एक निर्णय द्वारा निपटारा करेंगे, क्योंकि वे सामान्य मुद्दे उठाते हैं। तीन अपीलकर्ता (1) इंपीरियल होटल, नई दिल्ली, (2) मेडेन होटल, दिल्ली और (3) स्विस् होटल, दिल्ली के प्रबंधन हैं, प्रतिवादी उनके संबंधित कर्मचारी हैं जिनका प्रतिनिधित्व होटल श्रमिक संघ, कटरा शहंशाही, चांदनी चौक, दिल्ली द्वारा किया गया है।

ऐसा लगता है कि इन होटलों और उनके कर्मचारियों के बीच पिछले कुछ समय से वहां कार्यरत श्रमिकों की श्रम स्थितियों को लेकर विवाद चल रहा था। ऐसा लगता है कि सितंबर 1955 के अंत में मामला चरम पर पहुंच गया और 5 अक्टूबर 1955 को तीनों होटलों के सभी कर्मचारियों की हड़ताल हो गई। इन तीनों होटलों में इस सामान्य हड़ताल से पहले, इंपीरियल होटल में अगस्त 1955 को कुछ परेशानी हुई। उस संबंध में 22 कामगारों को आरोप पत्र दिए गए थे और प्रबंधन द्वारा एक जांच की गई थी, जो

इस निष्कर्ष पर पहुंची कि श्रमिक दुर्व्यवहार के दोषी थे और इसलिए उन्हें बर्खास्त करने का फैसला लिया गया। परिणामतः, 4 अक्टूबर, 1955 को इन कामगारों को नोटिस दिया गया जिसमें बताया गया कि प्रबंधन ने औद्योगिक विवाद अधिनियम, 1947 (जिसे यहां से आगे अधिनियम कहा गया है) की धारा 33 के तहत अनुमति प्राप्त करने के अधीन इन श्रमिकों को बर्खास्त करने का फैसला लिया है। ऐसा लगता है कि इंपीरियल होटल के प्रबंधन की इस कार्यवाही के कारण तीनों होटलों में 5 अक्टूबर, 1955 को आम हड़ताल हुई। इसके बाद तीनों प्रबंधनों ने 5 अक्टूबर, 1955 को कर्मचारियों को नोटिस जारी किया जिसमें उन्हें तीन घंटों में पुनः अपने कार्य पर लौटने का निर्देश दिया गया जिसकी पालना नहीं होने पर उनके खिलाफ कार्यवाही की जाएगी। चूंकि कामगार इस समय में वापस शामिल नहीं हुए, इसलिए उसी दिन नए नोटिस जारी किए गए जिसमें उनसे यह पूछा गया कि उनके खिलाफ अनुशासनात्मक कार्यवाही क्यों न की जाए इसके वे कारण बताएं। इस बीच उन्हें सूचित किया गया कि वे निलंबित रहेंगे। 7 अक्टूबर, 1955 को, तीनों प्रबंधनों ने कामगारों को नोटिस जारी कर सूचित किया कि उन्हें बर्खास्त करने का निर्णय लिया गया है और धारा 33 के तहत अनुमति मिलने तक उन्हें निलंबित किया जा रहा है।

चूंकि होटल और उनके कर्मचारियों के बीच विवाद पहले से ही सरकार के विचाराधीन थे, इसलिए 12 अक्टूबर, 1955 को इंपीरियल होटल से संबंधित एक संदर्भ आदेश दिया गया था। इस संदर्भ में बड़ी संख्या में मामलों को निर्णय के लिए भेजा गया था, जिसमें 22 श्रमिकों का मामला भी शामिल था, जिन्हें होटल के प्रबंधन ने 4 अक्टूबर, 1955 को बर्खास्त करने का फैसला किया था। यह संदर्भ इंपीरियल होटल के संबंध में है, हालांकि 7 अक्टूबर, 1955 को बर्खास्त किए गए कर्मचारियों के संबंध में नहीं है। ऐसा लगता है कि इस संबंध में प्रबंधन द्वारा आगे की पूछताछ की गई और अंततः 7 अक्टूबर को 19 श्रमिकों के संबंध में की गई कार्यवाही की पुष्टि करने का

निर्णय लिया गया। इन 19 श्रमिकों ने इस बीच अधिनियम की धारा 33 के तहत आवेदन किया कि उन्हें बिना वेतन अनिश्चितकाल के लिए निलंबित किया गया है और इस प्रकार धारा 33 के उल्लंघन के लिए दंडित किया गया था। इस प्रकार, जहां तक इम्पीरियल होटल का संबंध है, विवाद 44 श्रमिकों के संबंध में था जिनमें से 25 को 12 अक्टूबर, 1955 के संबंध में हैं और बचे हुए 19 श्रमिकों ने अधिनियम की धारा 33 के अंतर्गत आवेदन किया है। हालांकि ऐसा प्रतीत नहीं होता है कि इम्पीरियल होटल ने अधिनियम की धारा 33 के तहत इन 19 श्रमिकों को बर्खास्त करने के लिए कोई भी आवेदन किया हो, हालांकि 22 श्रमिकों जिनकी बर्खास्तगी का निर्णय 4 अक्टूबर 1955 को लिया गया था के संबंध में 22 अक्टूबर 1955 को आवेदन किया गया था।

जहां तक मेडन होटल का संबंध है, यह मामला 26 श्रमिकों से संबंधित है जिनकी बर्खास्तगी को प्रबंधन ने अंततः 7 अक्टूबर 1955 के बाद आगे की जांच के लिए आवश्यक माना था। इस होटल के मामले में 23 नवंबर को एक संदर्भ आदेश दिया गया था जिसमें 26 श्रमिकों के मामले को अन्य मामलों के साथ न्यायाधिकरण को भेजा गया था लेकिन बाद में इनमें से 12 कामगारों को 10 दिसम्बर 1955 को वापस नियुक्त किया गया था और इसलिए अब से विवाद होटल के संदर्भ में 14 श्रमिकों से संबंधित है।

स्विस होटल के मामले में भी 7 अक्टूबर के नोटिस के बाद आगे की पूछताछ हुई। इस बीच, अधिनियम की धारा 33 के तहत संघ द्वारा सुलह अधिकारी को एक आवेदन किया गया। ऐसा लगता है कि 10 नवंबर 1955 को 14 कामगारों के संबंध में निर्णय के लिए न्यायाधिकरण को निर्देश दिया गया था।

अब हम औद्योगिक न्यायाधिकरण के समक्ष कार्यवाही पर आते हैं। तीनों मामलों में, कर्मचारियों की ओर से अंतरिम राहत के लिए आवेदन दायर किए गए थे,

इम्पीरियल होटल के मामले में आवेदन की तारीख 22 अक्टूबर व मेडन होटल और स्विस् होटल के मामले में 26 नवंबर थी। इन आवेदनों का जवाब प्रबंधन द्वारा 5 दिसंबर 1955 को दायर किए गए थे। उसी दिन औद्योगिक न्यायाधिकरण ने अंतरिम राहत देते हुए एक आदेश पारित किया। इम्पीरियल होटल के मामले में, इसने आदेश दिया कि अंतरिम राहत के लिए आवेदन करने वाले 44 श्रमिकों में से 43 को उनकी मजदूरी व 25/- रूपए प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति खाने के बदले का भुगतान किया जाना चाहिए जब तक उनकी बर्खास्तगी का फैसला होता है। मेडन होटल के मामले में, प्रबंधन 12 श्रमिकों को वापस लेने के लिए तैयार था और उन्हें 10 दिसंबर 1955 से पहले ड्यूटी पर रिपोर्ट करने के लिए आदेश दिया गया था। ये भी आदेश दिया गया था कि इन 12 श्रमिक जब तक उन्हें पुनःनियुक्ति दी जाती है और बाकी 13 श्रमिकों को उनके मामले के निर्णय तक अंतरिम राहत के रूप में 1 अक्टूबर 1955 तक उनके वेतन व 25/- रूपए प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति भोजन के बदले का भुगतान किया जाएगा। होटल के 26वें श्रमिक चिरंजीलाल सफाईकर्मी के संबंध में कोई भी निर्णय पारित नहीं किया गया। स्विस् होटल के मामले में, प्रबंधन 6 श्रमिकों को वापस लेने के लिए तैयार था और उन्हें 10 दिसंबर 1955 को या उससे पहले ड्यूटी के लिए रिपोर्ट करने का आदेश दिया गया था। अन्य मामलों में आदेश उन्हीं शब्दों में थे जैसे मेडन होटल के मामले में थे।

इसके बाद अंतरिम राहत देने वाले तीन आदेशों के खिलाफ तीन होटलों द्वारा तीन अपीलें की गईं। इन अपीलों को श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण ने 28 मई, 1956 को खारिज कर दिया। इसके बाद तीन होटलों ने इस न्यायालय में अपील करने के लिए विशेष अनुमति के लिए आवेदन किया, जिसे मंजूर कर लिया गया। उन्होंने मजदूरी और रुपये के भुगतान से संबंधित औद्योगिक न्यायाधिकरण के वेतन भुगतान करने व 25/- रूपए प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति भोजन के बदले दिये जाने के आदेश पर रोक लगाने के

लिए भी आवेदन किया। इस न्यायालय द्वारा 5 जून, 1956 को इस शर्त पर रोक लगा दी गई थी कि नियोक्ता कर्मचारियों को 5 दिसंबर, 1955 के आदेशों द्वारा देय राशि के आधे के बराबर राशि का भुगतान करेंगे, तब तक उपार्जित बकाया के संबंध में और भविष्य में उसी अनुपात में भुगतान करना जारी रखेंगे जब तक कि पक्षों के बीच विवाद का निर्धारण नहीं हो जाता। ऐसा प्रतीत होता है कि 5 जून, 1956 के इस आदेश के बाद, उन श्रमिकों को भी, जिन्हें 5 दिसंबर 1955 के आदेश के बाद फिर से नियुक्त नहीं किया गया था, 15 जुलाई 1956 को तीनों होटलों द्वारा सेवा में वापस ले लिया गया था। इस प्रकार, मामले में 2 कर्मचारी स्विस होटल के मामले में, 13 श्रमिक मेडन होटल के मामले में और 43 श्रमिक इंपीरियल होटल के मामले में सेवा में वापस ले लिए गए थे।

होटलों की ओर से मुख्य विवाद दो हैं, (1) उन श्रमिकों को कोई भी देय मजदूरी है जिन्हें धारा 33 के तहत अनुमति मांगे जाने तक निलंबित कर दिया जाता है? और (2) क्या एक औद्योगिक न्यायाधिकरण अंतरिम अधिनिर्णय दिए बिना अंतरिम राहत देने में सक्षम है जिसे प्रकाशित किया जाना चाहिए था?

रे.(1) अपीलार्थियों का तर्क इस शीर्ष के तहत यह है कि अधिनियम की धारा 33 के तहत श्रमिकों के निलंबन की अनुमति मिलने तक वेतन के भुगतान पर पूर्ण प्रतिबंध लगाती है। दूसरी ओर, उत्तरदाताओं की ओर से यह तर्क दिया गया है कि रोजगार के अनुबंध में स्पष्ट अवधि के अभाव में स्वामी और सेवक के सामान्य कानून के तहत मजदूरी का भुगतान न करने वाले श्रमिकों के निलंबन पर बिल्कुल ही विचार नहीं किया गया है। चूंकि इन मामलों में वेतन के भुगतान के बिना निलंबन प्रदान करने वाला कोई स्थायी आदेश नहीं था, इसलिए अपीलकर्ताओं के लिए वेतन रोकना संभव नहीं था क्योंकि इन मामलों में किए गए निलंबन के आदेशों का मतलब केवल इतना था कि नियोक्ता श्रमिकों से सेवा लेने के लिए तैयार नहीं थे। फिर भी, श्रमिकों

का वेतन प्राप्त करने का अधिकार बना रहा और नियोक्ता तथाकथित निलंबन के दौरान भी उन्हें वेतन देने के लिए बाध्य था। औद्योगिक न्यायाधिकरण के साथ साथ अपीलीय न्यायाधिकरण ने यह विचार किया कि रोजगार के अनुबंध में एक स्पष्ट अवधि की अनुपस्थिति में, मजदूरी को रोका नहीं जा सकता है, भले ही नियोक्ता श्रमिक को इस अर्थ में निलंबित कर सकता है कि वह इसके लिए तैयार नहीं था।

इसलिए पहला प्रश्न जो विचारणीय है वह स्वामी और सेवक के सामान्य कानून के तहत किसी कर्मचारी को निलंबित करने की नियोक्ता की शक्ति की सीमा है। अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि एक नौकर को काम करने से रोकने के अधिकार के अर्थ में निलंबित करने की शक्ति स्वामी और सेवक के मध्य अनुबंध में एक निहित शर्त नहीं है और ऐसी शक्ति दोनों में से किसी एक की ही हो सकती है, या तो अनुबंध को नियंत्रित करने वाला एक कानून या अनुबंध में ही एक स्पष्ट शर्त। इसलिए आमतौर पर अनुबंध में या किसी कानून के तहत बनाए गए नियमों में एक स्पष्ट शर्त के रूप में ऐसी शक्ति की अनुपस्थिति का मतलब होगा कि स्वामी के पास किसी कर्मचारी को निलंबित करने की कोई शक्ति नहीं होगी भले ही वह ऐसा इस अर्थ में करता है कि वह कर्मचारी को काम करने के लिए मना करता है फिर भी उसे तथाकथित निलंबन अवधि के दौरान वेतन का भुगतान करना होगा। हालांकि जहां नियुक्ति के अनुबंध में या वैधानिक कानून या उसके तहत बनाए गए नियमों के अनुसार निलंबित करने की शक्ति हो, तो निलंबन का प्रभाव होगा स्वामी और सेवक के मध्य संबंधों का निलंबन, जिसका परिणाम होगा कि सेवक अपनी सेवा प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है व स्वामी उसे वेतन भुगतान करने हेतु बाध्य नहीं है। स्वामी और सेवक के सामान्य कानून के ये सिद्धांत अच्छी तरह से स्थापित हैं और हमारे सामने किसी भी पक्ष द्वारा विवादित नहीं है। इस संबंध का संदर्भ लिया जा सकता है हेनले बनाम पीज़ एण्ड पार्टनर्स

लिमिटेड(1), वॉलवर्क बनाम फील्डिंग(2), भारत की राज्य परिषद के सचिव बनाम सुरेन्द्र नाथ गोस्वामी(3) और रूरा राम बनाम संभागीय अधीक्षक, एन.डब्ल्यू. रेल्वे(4)

अगला प्रश्न जो विचाराधीन है वह यह है कि क्या ये सिद्धांत ऐसे मामले पर भी लागू होते हैं जहां स्वामी ने एक सेवक को बर्खास्त करने का फैसला किया है, लेकिन तुरंत ऐसा नहीं कर सकता क्योंकि उसे अधिनियम की धारा 33 के तहत अनुमति लेनी होती है और इसलिए वह श्रमिक को अनुमति मिलने तक निलंबित कर देता है। यह हमें औद्योगिक कानून के क्षेत्र में लाता है। सामान्यतः अगर अधिनियम की धारा 33 का हस्तक्षेप नहीं हो, तो स्वामी ओर सेवक के सामान्य कानून के अनुसार स्वामी सेवक को निलंबित करने की शक्ति का हकदार होगा और अनुबंध के समाप्त हो जाने से वेतन भुगतान भी बाध्य नहीं होगा। लेकिन जहां तक अधिनियम की धारा 33 के तहत आने वाले मामले का संबंध है तो धारा 33 ने स्वामी और सेवक के सामान्य कानून में एक मौलिक परिवर्तन पेश किया है। इसलिए यह देखा जाना चाहिए कि क्या औद्योगिक न्यायाधिकरण जो अधिनियम के अंतर्गत मामले से निपट रहे हैं उन्हें स्वामी और सेवक के सामान्य कानूनों का पालन करना चाहिए जैसा कि ऊपर संकेत दिया गया है या अधिनियम की धारा 33 के तहत विशिष्ट परिस्थितियों में अनुबंध में एक शर्त के रूप में लागू किया जाना चाहिए जहां स्वामी ने अपनी जांच पूरी कर ली है और अपने निर्णय तक पहुंच गया है कि कर्मचारी को बर्खास्त किया जाना चाहिए और कर्मचारी को अधिनियम की धारा 33 की अनुमति मिलने तक निलंबित कर दिया है, उसके पास यह निलंबित करने की शक्ति है, जिसका परिणाम होगा स्वामी और सेवक के संबंधों का अस्थायी रूप से निलंबन जिससे सेवक अपनी सेवा प्रदान करने के लिए बाध्य नहीं है और स्वामी वेतन भुगतान के लिए बाध्य नहीं है। इस तरह के औद्योगिक विवादों से उत्पन्न होने वाले मामलों में औद्योगिक न्यायाधिकरण की शक्ति पर संघीय न्यायालय ने पश्चिमी भारत ऑटोमोबाइल एसोसिएशन बनाम औद्योगिक न्यायाधिकरण, बॉम्बे में

विचार किया गया और महाजन जे. (जैसा कि उस समय थे) की चण् 345 में निम्नलिखित टिप्पणियां उपयुक्त हैं:

“हमारी राय में, निर्णय का मतलब स्वामी और सेवक के सख्त कानून के अनुसार निर्णय नहीं है। न्यायाधिकरण के फैसले में किसी विवाद के निपटारे के प्रावधान शामिल हो सकते हैं जिसे कोई भी अदालत तब आदेश नहीं दे सकती जब वह सामान्य कानून से बंध हो, लेकिन न्यायाधिकरण किसी भी तरह से इन सीमाओं से बंधा नहीं है। लुडविग टेलर द्वारा लिखित श्रम विवाद और सामूहिक सौदेबाजी के खंड 1 में चण् 536 में यह कहा गया है कि औद्योगिक मध्यस्थता में मौजूदा समझौते का विस्तार या एक नये समझौते का निर्माण, या आमतौर पर नए दायित्व का निर्माण, या पुरानों का संशोधन शामिल हो सकता है, जबकि वाणिज्यिक मध्यस्थता आमतौर पर व्याख्या और मौजूदा समझौतों से संबंधित विवादों से संबंधित होती है। हमारी राय में श्रम विवादों में औद्योगिक न्यायाधिकरण के कार्यों के विषय यह सत्य है।

इस न्यायालय ने रोहतास इंडस्ट्रीज लिमिटेड बनाम बृजनंदन पांडे(2) में संघीय न्यायालय के फैसले में निर्धारित उक्ति की शुद्धता को भी मान्यता दी और देखा की वाणिज्यिक और औद्योगिक मध्यस्थता के बीच अंतर था और उसी का संदर्भ देने के बाद लुडविग टेलर द्वारा लिखित “श्रम विवाद और सामूहिक सौदेबाजी (खण्ड 1, चण् 536) का अंश चण् 810 पर इस प्रकार दिया गया है:-

“एक न्यायालय इस आधार पर आगे बढ़ता है कि लोगों के लिए अनुबंध करने के लिए अदालतों में कोई शक्ति मौजूद नहीं है; और दलों को अपना समझौता खुद करना होगा। न्यायालय अपनी शक्ति की सीमा पर पहुंच जाते हैं जब वे दल द्वारा किए गए अनुबंधों को लागू करते हैं। एक औद्योगिक न्यायाधिकरण इतना बंधा हुआ नहीं है और

औद्योगिक शांति के हित में वैध ट्रेड यूनियन गतिविधियों की रक्षा करने और अनुचित व्यवहार या उत्पीड़न को रोकने के लिए नए दायित्व बना सकता है या अनुबंधों को संशोधित कर सकता है।”

तो यह स्पष्ट है कि विशिष्ट परिस्थितियों में औद्योगिक न्यायाधिकरणों के पास स्वामी और सेवक के सामान्य कानूनों के परे जाने की शक्ति है। इन मामलों में अधिनियम की धारा 33 के द्वारा पेश किए गए मूल परिवर्तनों की परवाह किये बिना श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण के फैसले स्वामी और सेवक के सामान्य कानूनों के आधार पर सख्ती से लागू किये गये हैं। स्वामी और सेवक के सामान्य कानूनों के संबंध में हमें जिन सभी मामलों का उल्लेख किया गया है उनमें धारा 33 के इस कानून में स्वामी के द्वारा निलंबन की शक्ति के संबंध में प्रभाव के विचार का कोई अवसर नहीं था। इसलिए हमें यह देखना होगा कि यह एक औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए उचित होगा जहां मामले में अधिनियम की धारा 33 लागू होती है, कि वह अनुबंध में एक शर्त शामिल करे जो स्वामी को सेवक को बर्खास्त करने की शक्ति देती है जब स्वामी आवश्यक जांच के बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि सेवक ने कदाचार किया है और उसे बर्खास्त किया जाना चाहिए पर धारा 33 की वजह से वह ऐसा नहीं कर सकता। उत्तरदाताओं की ओर से यह आग्रह किया जाता है कि अधिनियम की धारा 33 की भाषा में ऐसा कुछ भी नहीं है जिससे यह निष्कर्ष निकलता हो कि जब नियोक्ता इसके तहत अनुमति के लिए आवेदन करता है तो वह संबंधित श्रमिकों को निलंबित कर सकता है। हालांकि यह तर्क सवाल उठाता है क्योंकि यदि अधिनियम की धारा 33 में ऐसा कोई प्रावधान होता तो यह इस तरह के निलंबन को अधिकृत करने वाला एक स्पष्ट प्रावधान होता और निहित शर्त का कोई और सवाल नहीं उठता। हमें यह देखना है कि क्या धारा 33 से स्पष्ट प्रावधान के अभाव में, अधिनियम की धारा 33 के द्वारा उत्पन्न इन विशिष्ट परिस्थितियों में औद्योगिक न्यायाधिकरण के लिए यह उचित होगा कि वह

अनुबंध में एक शर्त शामिल करे जो नियोक्ता को नियुक्ति के अनुबंध को निलंबित करने की शक्ति देती हो, इस प्रकार, वह खुद को वेतन देने के दायित्व से मुक्त कर ले और सेवक को सेवा प्रदान करने के दायित्व से मुक्त कर दे। हमारी राय है कि धारा 33 को लागू करने से उत्पन्न होने वाली असाधारण परिस्थिति में यह उचित और निष्पक्ष है कि औद्योगिक न्यायाधिकरण इस तरह की शर्त नियुक्ति के अनुबंध में उल्लेखित करवाए।

इस न्यायालय को चार मामलों में से इस मामले का विचार करने का अवसर मिला, हालांकि इस बिन्दु पर उस प्रकार तर्क नहीं हुए जिस प्रकार अब हुए हैं। लेकिन इन मामलों पर विचार करने से पता चलेगा कि यद्यपि इस मुद्दे पर विशेष रूप से तर्क नहीं दिया गया था, इस न्यायालय का विचार हमेशा यह रहा है कि इन मामलों में एक शर्त का उल्लेख किया जाना चाहिए जो स्वामी को नियुक्ति के अनुबंध के निलंबन की शक्ति दे जब वह इस उचित जांच के बाद इस निर्णय पर पहुंच चुका है कि कर्मचारी को बर्खास्त किया जाना चाहिए और उसे अधिनियम की धारा 33 के तहत अनुमति लेनी चाहिए।

लक्ष्मी देवी शुगर मिल्स लिमिटेड बनाम पं. राम सरूप(1) में स्थायी आदेश में बिना वेतन चार दिनों तक निलंबन का प्रावधान था। हालांकि, वास्तविकता में, उस मामले में नियोक्ता ने इस निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कि कर्मचारियों को बिना वेतन भुगतान बर्खास्त किया जाना चाहिए, उन्हें न्यायाधिकरण की अनुमति के बिना कर्मचारियों को बिना वेतन निलंबित कर दिया और यह माना गया कि यह निलंबन सजा नहीं थी, भले ही उस निलंबन को चार दिन से अधिक हो गए थे। यह मुख्य बिन्दु था जो उस मामले में विचाराधीन था, लेकिन यह आगे देखा गया कि इस तरह का निलंबन केवल एक अंतरिम उपाय था और तब तक चलेगा जब तक कि कामगार को दंडित करने की अनुमति के लिए आवेदन नहीं किया जाता और न्यायाधिकरण उस

पर आदेश पारित नहीं कर देता। यदि अनुमति दे दी गई तो कर्मचारी को निलंबन की अवधि के दौरान भुगतान नहीं किया जाएगा; लेकिन यदि अनुमति देने से इनकार कर दिया गया तो उसे पूरी अवधि के लिए भुगतान करना होगा।

रानीपुर कोलियरी का प्रबंधन बनाम भुवन सिंह(2) के मामले में यह बताया गया था कि इस प्रतिबंध के लिए नियोक्ता को अपनी जांच पूरी होने के तुरंत बाद इस निष्कर्ष पर पहुंचने पर कि कर्मचारी कदाचार का दोषी था, कर्मचारी को बर्खास्त करने का अधिकार होगा। इस निष्कर्ष के बाद तत्काल बर्खास्तगी द्वारा सेवा का अनुबंध समाप्त कर दिया जाएगा और कर्मचारी किसी भी अतिरिक्त वेतन का हकदार नहीं होगा। लेकिन धारा 33 नियोक्ता को उसकी जांच के निष्कर्ष पर पहुंचने के बाद कर्मचारी को बर्खास्त करने से रोकती है और उसे न्यायाधिकरण की अनुमति लेने के लिए बाध्य करती है। इसलिए यह उचित था कि नियोक्ता ने सेवा के अनुबंध को समाप्त करने के लिए वह सब कुछ किया जो वह कर सकता था और उससे कर्मचारी को भुगतान जारी रखने की उम्मीद नहीं की जा सकती। यह बताया गया कि ऐसे मामले में नियोक्ता द्वारा कर्मचारी को बिना वेतन के निलंबित करना उचित होगा क्योंकि न्यायाधिकरण द्वारा अधिनियम की धारा 33 के तहत अनुमति देने के लिए लिया गया समय नियोक्ता के नियंत्रण से बाहर था। अतः में यह बताया गया कि इससे कर्मचारी को कोई कठिनाई नहीं होगी क्योंकि अगर न्यायाधिकरण ने अनुमति दे दी तो कर्मचारी को बिना वेतन निलंबन की तारीख से कुछ प्राप्त नहीं होगा, जबकि अनुमति देने से इनकार किया तो उसे बिना वेतन निलंबन की तारीख से वेतन प्राप्ति का हकदार होगा। लक्ष्मी देवी शुगर मिल्स लिमिटेड (1) का उल्लेख किया गया और यह समझाया गया कि उस मामले में निर्धारित सिद्धांत केवल वहीं लागू होगा जहां अधिनियम की धारा 33 लागू होगी।

मेसर्स सासा मूसा शुगर वर्क्स (पी) लिमिटेड बनाम शोबरती खान (2) पहले के मामले में लिए गए दृष्टिकोण को इस शर्त के साथ दोहराया गया था कि यदि नियोक्ता

ने जांच नहीं की और अनुमति लंबित रहने तक कर्मचारी को निलंबित कर दिया तो धारा 33 के तहत कार्यवाही समाप्त होने व न्यायाधिकरण द्वारा कर्मचारी को बर्खास्त करने की अनुमति देने तक वेतन का भुगतान करते रहना होगा।

फुलबारी टी एस्टेट बनाम उसके कर्मचारी(3) मेसर्स सासा मूसा शुगर वर्क्स (पी) लिमिटेड(2) के मामले में निर्धारित शर्त को अधिनियम की धारा 15 के तहत एक निर्णय में आगे बढ़ाया गया था और यह इंगित किया था कि अगर नियोक्ता द्वारा की गई जांच में कोई दोष था तो वह न्यायाधिकरण के समक्ष आवश्यक साक्ष्य प्रस्तुत करके उस दोष को दूर कर सकता है; लेकिन उस स्थिति में उसे न्यायाधिकरण के फैसले तक वेतन का भुगतान करना होगा, भले ही फैसला उसके पक्ष में गया हो।

उत्तरदाताओं की ओर से यह आग्रह किया जाता है कि किसी भी दर पर कुछ स्थायी आदेश थे, विशेष रूप से लक्ष्मी देवी शुगर मिल्स लिमिटेड (1) और रानीपुर कॉलियरी के प्रबंधन(4) को कुछ समय के लिए निलंबित करने की शक्ति दी गई थी और इसलिए निलंबन को उन स्थायी आदेशों के आधार पर उचित हो सकता है। हालांकि मेसर्स सासा मूसा शुगर वर्क्स (पी) लिमिटेड () के मामले में ऐसे कोई स्थायी आदेश उस समय तक लागू नहीं थे। हालांकि इन मामलों में निर्णयों का अनुपात स्थायी आदेशों की उपस्थिति या अनुपस्थिति पर आधारित नहीं था क्योंकि उन मामलों के बीच सैद्धांतिक रूप से बहुत कम अंतर है जहां स्थायी आदेशों द्वारा बिना वेतन के कुछ दिनों के निलंबन का प्रावधान किया था और निलंबन को बहुत लंबी अवधि के लिए जारी रखा गया था और जहां बिना वेतन के निलंबन के लिए कोई स्थायी आदेश नहीं थे। हमारी राय है कि यद्यपि ये मामले स्पष्ट रूप से कर्मचारी को निलंबित करने और इस प्रकार स्वामी और सेवक के संबंध अस्थायी रूप से निलंबित करने के लिए रोजगार के अनुबंध में निहित अवधि के आधार पर आगे नहीं बढ़े, लेकिन यही वह अंतर्निहित आधार होना चाहिए जिसपर ये निर्णय दिए गए। लेकिन ऐसी शर्त निहित होने के

कारण, यह कहना बिल्कुल भी संभव नहीं होगा, जैसा कि इन मामलों में निर्धारित किया गया था, कि यदि एक उचित जांच की गई थी और नियोक्ता ने कर्मचारी को बर्खास्त करने और अनुमति के लिए आवेदन करने का फैसला किया और इसके परिणामस्वरूप कर्मचारी को निलंबित कर दिया तो उस पर निलंबन की तारीख से मजदूरी का भुगतान करने का कोई दायित्व नहीं होगा यदि उसे धारा 33 के तहत अनुमति दी गई थी। इसलिए हमारी राय है कि निलंबन के संबंध में स्वामी और सेवक के सामान्य कानून को धारा 33 के द्वारा उस कानून में प्रस्तुत किए गए मौलिक नियमों के आधार पर ही संशोधित किया जाना चाहिए और औद्योगिक न्यायाधिकरणों द्वारा नियुक्ति के अनुबंध में एक शर्त निहित की जानी चाहिए यदि स्वामी ने उचित जांच की है और इस निर्णय पर पहुंचे हैं कि सेवक को बर्खास्त किया जाना चाहिए और उसके परिणामस्वरूप धारा 33 के तहत अनुमति लंबित रहते हुए कर्मचारी को निलंबित कर दिया है उसके पास इस प्रकार के निलंबन का आदेश देने की शक्ति होती है, इस प्रकार नियुक्ति के अनुबंध को अस्थायी रूप से निलंबित कर देता है कि उस पर कर्मचारी को वेतन भुगतान को कोई दायित्व न हो और कर्मचारी पर कार्य करने का कोई दायित्व न हो। इस बिंदु से निपटने में धारा 33 के बुनियादी और निर्णायक विचार को ध्यान में रखा जाना चाहिए। स्वामी को सेवक को उचित कारण से बर्खास्त करने के अविवादित सामान्य कानून को धारा 33 के द्वारा प्रतिबंधित कर दिया गया है और निष्पक्षता में इसका मतलब यह होना चाहिए कि इस वैधानिक प्रतिबंध के हटने तक स्वामी उचित जांच के बाद धारा 33 की कार्यवाही के तहत सेवक को निलंबित कर स्वामी और सेवक के संबंध को अस्थायी रूप से खत्म कर सकता है। अतः अगर न्यायाधिकरण अनुमति देता है, तो निलंबित अनुबंध खत्म हो जाएगा और निलंबन की तारीख के बाद वेतन भुगतान का कोई दायित्व नहीं रहेगा। अगर, दूसरी ओर, अनुमति

नहीं दी जाती है तो निलंबन गलत होगा और कर्मचारी निलंबन की तारीख से वेतन का हकदार होगा।

हालांकि जहां तक इन मामलों में अंतरिम राहत का सवाल है यह मामला अभी समाप्त नहीं हुआ है। भले ही नियोक्ता द्वारा उक्त परिस्थितियों में एक कर्मचारी को निलंबित करने की शक्ति देने वाली एक शर्त हो सकती है, वह नियोक्ता द्वारा कर्मचारी को निलंबित करने की शक्ति के लिए न्यायाधिकरण की अंतरिम राहत देने की शक्ति को पहले से ही ऊपर उल्लेखित सिद्धांतों अनुसार प्रभावित नहीं करेगा। अगर अधिनियम के अनुसार न्यायाधिकरण के पास यह शक्ति है। इस तरह निहित शर्त का होना न्यायाधिकरण की अंतरिम राहत देने से नहीं रोकता है अगर अधिनियम के तहत उसके पास ऐसा करने की शक्ति है। यह हमें दूसरे बिन्दु पर लाता है जिसपर इन अपीलों में विचार किया गया है।

रे.(2)अधिनियम की धारा 10 के तहत न्यायाधिकरण को भेजे गए एक विवाद के बाद, धारा 15 के द्वारा इसकी कार्यवाही शीघ्र करने का आदेश है और समाप्त होने पर इसका अधिनिर्णय उचित सरकार को प्रस्तुत करना है। एक "अधिनिर्णय" को अधिनियम की धारा 2(बी) में "किसी औद्योगिक विवाद या उससे संबंधित प्रश्न में औद्योगिक न्यायाधिकरण का एक अंतरिम या अंतिम निर्धारण" के रूप में परिभाषित किया है जहां न्यायनिर्णयन के लिए विवाद के बिंदुओं को निर्दिष्ट करते हुए औद्योगिक विवाद में आदेश दिया गया है वहां न्यायाधिकरण को उन बिंदुओं और उनके आनुषंगिक मामलों के लिए अपने न्यायनिर्णयन को सीमित करना होगा; (धारा 10(4))। अपीलार्थियों की ओर से यह आग्रह किया जाता है कि न्यायाधिकरण इन मामलों में दिए गए बिन्दुओं तक अपने न्यायनिर्णयन को सीमित करे और चूंकि इसमें अंतरिम राहत के सवाल का संदर्भ नहीं था, न्यायाधिकरण उस पर निर्णय नहीं ले सका। हमारी राय है कि धारा 10(4) में आने वाले शब्द "आनुषंगिक" के संदर्भ में इस तर्क में कोई

बल नहीं है। इसमें कोई संदेह नहीं हो सकता है कि, उदाहरण के लिए, बहाली और/ या मुआवजे के प्रश्न को न्यायाधिकरण में न्यायनिर्णयन के लिए संदर्भित किया जाता है तो उसी मामले में न्यायाधिकरण के निर्णय तक अंतरिम राहत देने का प्रश्न धारा 10(4) के तहत आनुषंगिक मामला होगा और उसे विशेष रूप से न्यायाधिकरण को संदर्भित नहीं करना होगा। इस प्रकार अंतरिम राहत जहां स्वीकार्य है उसे स्पष्टीकृत शब्दों में संदर्भित किए बिना न्यायाधिकरण को संदर्भित मुख्य प्रश्न के आनुषंगिक मामले के रूप में प्रदान किया जा सकता है।

अगल प्रश्न यह है कि न्यायाधिकरण मामले में आगे कैसे बढ़ें जब वह अंतरिम राहत देने का निर्णय करता है। "अधिनिर्णय" शब्द की परिभाषा यह दर्शाती है कि यह न्यायाधिकरण को सौंपे गए पूर्ण विवाद या उससे संबंधित प्रश्न का अंतरिम या अंतिम निर्धारण हो सकता है। इस प्रकार न्यायाधिकरण सभी कार्यवाहियों के अंत में पूरे विवाद के बारे में अधिनिर्णय देने के लिए स्वतंत्र है। यह इसे दिए गए औद्योगिक विवाद का अंतिम निर्धारण होगा। न्यायाधिकरण उसे संदर्भित कुछ मामलों में भी अधिनिर्णय देने के लिए खुला है भले ही कुछ का निर्णय होना बाकी हो। यह संबंधित किसी भी प्रश्न का अंतरिम निर्धारण होगा। किसी भी मामले में धारा 17 अनुसार इसे प्रकाशित करना आवश्यक होगा। हालांकि ऐसे अधिनिर्णय अंतरिम राहत की प्रकृति में नहीं हैं क्योंकि वे औद्योगिक विवाद और उससे सम्बन्धित कुछ प्रश्नों का निर्णय करते हैं। दूसरी ओर अंतरिम राहत धारा 10(4) के तहत निर्धारण के लिए विवाद के बिंदुओं के आनुषंगिक मामलों के संबंध में न्यायाधिकरण को दी गई शक्ति है।

हालांकि अपीलार्थियों की ओर से तर्क किया गया है कि न्यायाधिकरण के पास अधिनियम की धारा 10(4) के तहत इन मामलों में दी गई इस प्रकृति की अंतरिम राहत देने की शक्ति है फिर भी यह उचित सरकार को धारा 15 के तहत अधिनिर्णय देकर ही ऐसा कर सकता है। इस संबंध में धारा 15, 17 और 17 ए का संदर्भ लिया गया

है। यह साफ है कि जैसे ही न्यायाधिकरण एक निर्धारण करता है भले ही अंतरिम या अंतिम, उसे यह निर्धारण सरकार को प्रदर्शित करना होता है जिसे धारा 17 के तहत अधिनिर्णय के रूप में इसे प्रकाशित करना होता है और तत्पश्चात धारा 17 ए के प्रावधान लागू होंगे। जवाब में प्रतिवादी श्रम अपीलीय न्यायाधिकरण में एलन बेरी एण्ड कम्पनी लिमिटेड बनाम उसके कर्मचारी (1) के निर्णय पर निर्भर हैं, जहां यह माना गया है कि एक अंतरिम अधिनिर्णय एक अंतिम अधिनिर्णय की तरह सरकार को प्रकाशन के लिए नहीं भेजा गया था और वह आदेश की तारीख से प्रभावी होगा। हम यह नहीं सोचते कि वर्तमान उद्देश्यों के लिए यह निर्धारित करना आवश्यक है कि इस प्रकार की अंतरिम राहत देने वाला एक आदेश धारा 2(बी) के अर्थ में एक अधिनिर्णय है और इसलिए वह धारा 17 के तहत अवश्य ही प्रकाशित होना चाहिए। हम उपधारणा करेंगे कि 5 दिसंबर, 1955 को न्यायाधिकरण द्वारा पारित अंतरिम आदेश लागू नहीं किया जा सका क्योंकि वह अधिनिर्णय की प्रकृति में था और लागू होने के लिए धारा 17 ए के तहत लागू होने के लिए सरकार को दिया जाकर धारा 17 के तहत प्रकाशित होना था। हालांकि यह अभी भी हमारे विचार के लिए खुला है कि क्या हमें औद्योगिक न्यायाधिकरण के आदेश में इस कथित तकनीकी दोष को देखते हुए अंतरिम राहत देने वाला आदेश पारित करना चाहिए। हमारे पास औद्योगिक न्यायाधिकरण की तरह ही अंतरिम राहत देने की शक्ति है और हमारा आदेश सरकार को प्रकाशन के लिए भेजा जाना भी आवश्यक नहीं है क्योंकि धारा 15, 17 और 17 ए इस न्यायालय के आदेश पर लागू नहीं होते हैं जैसे वे अपीलीय न्यायाधिकरण के आदेश पर लागू नहीं होते जो औद्योगिक विवादों (अपीलीय न्यायाधिकरण) अधिनियम, 1950 (1950 के नं. गस्टप्प्), (तब से निरस्त) के द्वारा शासित है। हम पहले ही उल्लेख कर चुके हैं कि इस कोर्ट ने 5 जून 1956 को एक आदेश पारित किया, जिसमें 5 दिसंबर, 1955 को औद्योगिक न्यायाधिकरण के आदेश के कार्यान्वयन पर रोक लगाने की शर्तें थीं। हमारी राय है कि

वह आदेश इन कर्मचारियों को अंतरिम राहत देने के मामले में पारित करने के लिए सही आदेश है। आमतौर पर, अंतरिम राहत इन मामलों में कर्मचारियों को अंत में सफल होने पर मिलने वाली पूर्ण राहत नहीं होनी चाहिए। औद्योगिक न्यायाधिकरण और अपीलीय न्यायाधिकरण के प्रति निष्पक्षता में हमें यह कहना चाहिए कि उन्होंने पूर्ण वेतन के साथ 25/- रूपए प्रतिमाह प्रतिव्यक्ति को भोजन के बदले इस विचार पर दिए कि उन मामलों में कोई निलंबन संभव नहीं था और इसलिए सेवा का अनुबंध लगातार चलता रहा और पूर्ण वेतन भुगतान किया जाना चाहिए। उनके आदेश अलग हो सकते थे अगर कुछ और माना जाता। इसलिए इन परिस्थितियों में हमें यह आदेश उचित लगता है कि अपीलकर्ता 5 दिसंबर, 1955 के आदेशानुसार 1 अक्टूबर, 1955 से 10 दिसंबर, 1955 या 15 जुलाई, 1956 जिस दिनांक से जैसा कि हमने पहले भी इंगित किया है, सभी कर्मचारियों को सेवा में वापस लिया गया, कि अवधि के संबंध में न्यायालय द्वारा निर्धारित राशि की आधी राशि अपने कर्मचारियों को भुगतान करे। उसी के अनुसार हम आदेश देते हैं।

अंततः प्रतिवादियों की ओर से यह आग्रह किया गया है कि क्योंकि सभी संबंधित कर्मचारी सेवा में वापस लिए गए थे तो उन्हें अंतरिम अवधि के लिए पूर्ण वेतन भुगतान किया जाना चाहिए क्योंकि उनके पुनर्नियुक्ति का अर्थ है कि उन्हें बर्खास्त करने का निर्णय और उसके परिणामस्वरूप निलंबन के आदेश को खत्म कर दिया गया था। यह एक ऐसा मामला है जिस पर हम कोई राय व्यक्त नहीं करना चाहते। कार्यवाही अभी तक प्रारंभिक चरण में है और पूर्ण तथ्यों के अभाव में, छूट के प्रश्न पर पुनर्नियुक्ति का प्रभाव इस स्तर पर निर्धारित नहीं किया जा सकता है। यह इंगित करना पर्याप्त है कि हमने ऊपर जो आदेश पारित किया है वह एक अंतरिम राहत है और यह किसी न किसी तरह से संशोधित हो सकता है जब औद्योगिक न्यायाधिकरण उसे हमारे द्वारा किए गए अवलोकन की रोशनी में निलंबन के मामले को संदर्भित प्रश्नों का अंतिम

निर्धारण करने के लिए आगे बढ़ेगा। अपीलों को आंशिक रूप से अनुमति दी गई है और दिनांक 5 दिसंबर, 1955 के अंतरिम राहत देने के आदेश को ऊपर बताए गए तरीके से संशोधित किया गया है। इन परिस्थितियों में हम पक्षों को अपना अपना खर्चा वहन करने का आदेश देते हैं। चूंकि इन प्रारंभिक रिपोर्टों में संदर्भ दिए जाने के बाद से तीन साल का समय बीत चुका है, हमें विश्वास है कि औद्योगिक न्यायाधिकरण मामले को जितना जल्दी हो सके निपटाएगा।

आंशिक रूप से अपीलों की अनुमति दी गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी शहनाज़ परवीन आर जे एस द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।